आपातकाल

में

सृजन फुलवारी

भाऊराव महंत

अन्तरा-शब्दशक्ति
प्रकाशन

आपातकाल में सृजन फुलवारी

भाऊराव महंत

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश

978-93-5372-131-2
संपादक- डॉ. प्रीति समकित सुराना
तकनीकी संपादक एवं आवरण चित्र- संदीप कुमार सोनी, वारासिवनी
मुख्य कार्यालय- 15 नेहरू चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331
दूरभाष- (कार्या.) 07633-253159
मोबाईल- 9424765259
ईमेल- antrashabdshakti@gmail.com
वेबसाईट- www.antrashabdshakti
प्रथम संस्करण- 2020 भाऊराव महंत
मूल्य- 50.00 रूपये
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी
THE BOOK WRITTEN BY BHAURAO MAHANT
वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

आपातकाल में सृजन फुलवारी

सादर नमन,

आज देश जिस भयावह स्थिति से गुज़र रहा है उस स्थिति में देश का हर एक व्यक्ति या ये कहें कि विश्व का प्रत्येक मानव आर्थिक, मानसिक और शारीरिक रुप से व्यथित है। कोरोना (covid19) जैसी महामारी ने पूरे विश्व को नैराश्य के दौर में लाकर खड़ा कर दिया है।

ऐसे समय में जब हमें अनुशासित रहना है, सामाजिक दूरी बनाकर सीमित संसाधनों में जीना है, एकदम से अपनी दिनचर्या को बदलकर एकाकी जीवन यापन का अभ्यास करना है और मन में महामारी की दशहत से होने वाली नकारात्मकता और निराशा को भी नियंत्रित करना है तब सबसे सही हल होता है खुद को रचनात्मकता से जोड़ लेना। जो व्यक्ति जिस कला से जुड़ा हो उसे मनः स्थिति के अनुरुप उसी कला में सृजनात्मक हो जाना चाहिए।

बस इसी विचार ने एक दिन प्रेरित किया कि अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन से जुड़े रचनाकारों को एक सृजनात्मक सरप्राइज़ दिया जाए।

अन्तरा शब्दशक्ति और जीवन के सहभागी प्रिय 'समकित सुराना' से परामर्श किया तो उन्होंने भी सहर्ष हामी भर दी। मेरे संपादन के साथ तकनीकी संपादन की सारी जिम्मेदारी हमारे तकनीकि संपादक प्रिय 'संदीप सोनी' ने ले ली और इक्यावन दिन के लॉकडाउन में एक साथ 111किताबों का निःशुल्क ईसंस्करण तैयार किया जिसका मुद्रित संस्करण देश के परिस्थितियाँ सामान्य होते ही रचनाकारों की इच्छानुसार सशुल्क किया जा सकेगा।

अन्तरा शब्दशक्ति संस्था के सभी सदस्यों ने सृजन को हमेशा प्रेरित किया है जिसके लिए मैं सभी की हृदय से आभारी हूँ।

आपातकाल में कुछ न करने की सज़ा को कुछ करके खत्म करने में सहयोगी बने समकित, संदीप-टीना सोनी, बच्चों और पूरे परिवार की आभारी हूँ जिन्होंने हर पल मुझे मजबूत बनाए रखा।

आशा है ये सरप्राइज़ सभी रचनाकारों को उत्साहित करेगा और पाठकों को हमारा यह प्रयास पसंद आएगा। हमें प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

सादर आभार

संस्थापक एवं संपादक
अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
एवं पंजीकृत संस्था
डॉ प्रीति समकित सुराना

अनुक्रमणिका

1.	कोरोना के योद्धाओं को नमन	6
2.	बंगाल का अकाल	7
3.	पारिवारिक कलह	8
4.	स्वाभिमान	9
5.	रक्षक बने भक्षक	10
6.	अभी सृजन हुआ नहीं	11
7.	मूर्ख हैं मेरी नज़र में	12
8.	अरे! फिर मुझे जानता कौन?	13
9.	तृप्ति बोलो	14
10.	शब्द मेरे आचरण बतला रहे हैं	15
11.	बेरोजगार	16
12.	लक्ष्य तेरा दूर है रे..!	17
13.	जीत मिलेगी हार नहीं रे!	18
14.	विषैले मनुष्य	19
15.	अविकास	20
16.	इतने बुरे लगने लगे हैं	21

कोरोना के योद्धाओं को नमन

कोरोना के योद्धाओं को-
शत-शत करूँ प्रणाम; उन्हें मैं शत-शत करूँ प्रणाम!!

जो कोरोना से लड-लड़कर, इस बीमारी से भिड़-भिड़कर।
मार रहे थे खुद मर-मरकर, भागे नहीं कभी जो डरकर।
मैं तो उनके बलिदानों को-
शत-शत करूँ प्रणाम; उन्हें मैं शत-शत करूँ प्रणाम!!

कितने ड्राइवर व कंडक्टर, नर्सें चला रहीं हैं स्ट्रेचर।
सोते नहीं रात भर डॉक्टर, कर्मी काट रहें हैं चक्कर।
मैं इनके दृढ़ विश्वासों को-
शत-शत करूँ प्रणाम; उन्हें मैं शत-शत करूँ प्रणाम!!

रक्षाकर्मी लगे हुए हैं, रात-रात भर जगे हुए हैं।
दृढ़ कदमों से सधे हुए हैं, कर्मठ होकर पगे हुए हैं।
ऐसे वीर धीर लोगों को-
शत-शत करूँ प्रणाम; उन्हें मैं शत-शत करूँ प्रणाम!!

बेघर हो जो भटक गए हैं, बीच राह जो अटक गए हैं।
विभस्तता से पटक गए हैं, जो इस विष को गटक गए हैं।
मैं उन पीड़ित इंसानों को-
शत-शत करूँ प्रणाम; उन्हें मैं शत-शत करूँ प्रणाम!!

जिनका ढप व्यापार हो गया, यदि सूना शृंगार हो गया।
या सूना घर-द्वार हो गया, जो बेघर लाचार हो गया।
मैं उनकी हर करुणाओं को-
शत-शत करूँ प्रणाम; उन्हें मैं शत-शत करूँ प्रणाम!!

बंगाल का अकाल

दुर्भिक्ष था या काल था।
जिसमें फँसा बंगाल था।।

थे भूख से व्याकुल सभी, ऐसी न थी हालत कभी।
कृशकाय सब चुपचाप थे, लगता किसी के पाप थे।
हर आदमी कंकाल था, जिसमें फँसा बंगाल था।।

उजड़ी हुईं थीं बस्तियाँ, बस दिख रहीं थीं अस्थियाँ।
घर-द्वार-आँगन-राह में, थी मृत्यु सबकी आह में।
वह क्षेत्र ही बेहाल था, जिसमें फँसा बंगाल था।।

मुंडेर पर जो गिद्ध थे, शव भी उन्हीं से बिद्ध थे।
तन नोंचते खाते घृणित, होती रही जब मृत्यु नित।
वह दृश्य भी विकराल था, जिसमें फँसा बंगाल था।।

विकरालता, वीभत्सता, मुरझा गईं जीवन-लता।
कैसा बुरा सन्त्रास था, जब देश अपना दास था।
निज देशहित जंजाल था, जिसमें फँसा बंगाल था।।

चर्चिल बड़ा बेकार था, धोखा उसे स्वीकार था।
आदेश जो उसने किया, राशन नहीं आने दिया।
वह व्यक्ति सच शृंगाल था, जिसमें फँसा बंगाल था।।

पारिवारिक कहल

जब हो कलह परिवार में।
बसती घृणा घर-द्वार में।।

दो भाइयों के बीच में, दौलत-कलह के कीच में।
हों पुत्र जब लड़ने खड़े, संकीर्ण उर माँ रो पड़े।
कह तुच्छ निज चीत्कार में, जब हो कलह परिवार में।।

तेरी सुता-तिय-माँ-बहन, जब गालियाँ देते वदन।
छोड़ा नहीं निज बाप को, अपना रहे खुद पाप को।
अश्लीलता ललकार में, जब हो कलह परिवार में।।

माँ-बाप-तिय-भाई-बहन, कर एक दूजे को सहन।
प्रतिघात देते वज्र सम, हैं फोड़ते परमाणु बम।
उलझे हुए बेकार में, जब हो कलह परिवार में।।

दो गज धरा पाने सखे, सम शत्रु भाई जब लखे।
तब राम-लक्ष्मण की कथा, सुनना जगत में है वृथा।
रावण सदृश व्यवहार में, जब हो कलह परिवार में।।

घर खूबसूरत था मगर, अब लग रहा है खण्डहर।
था स्वर्ग-सा पहले सुखद, अब नर्क जैसा है दुखद।
सुख जल गया अंगार में, जब हो कलह परिवार में।।

स्वाभिमान

प्राप्त न हो सुख किञ्चित मुझको, जीवन भले दुखी रह जाए।
लेकिन कर्म नहीं करना वह, जिससे आँख झुकी रह जाए।।

ग्रीष्मकाल की जेठ सरीखी, चाहे धूप रहे जीवन में।
कालरात्रि के अंधकार सम, भले विपत्ति सहे जीवन में।
शूल नुकीले जीवन पथ पर, बिखरे चाहे उग्र खड़े हों।
फन फैलाए नाग रूप में, अवरोधक ये नित्य अड़े हों।
भीषण दुख भी सह लूँ लेकिन, मुख पर अल्प हँसी रह जाए।
लेकिन कर्म नहीं करना वह, जिससे आँख झुकी रह जाए।।

कितने लोग सफ़र करते हैं, एक अकेले के चलने से।
कितनों को मृदु फल मिलता है, एक वृक्ष के ही फलने से।
मैं भी एक सहारा जग में, मातु-पिता, बीवी-बच्चों का।
पंथी-पंछी को दे आश्रय, मैं हूँ खड़ा उसी बरगद-सा।
चाहे पतझड़ भी आ जाए, मेरी छाँव घनी रह जाए।
लेकिन कर्म नहीं करना वह, जिससे आँख झुकी रह जाए।।

जैसी भी कविता लिखता हूँ, भरता हूँ अपने भावों को।
इसी तरह मैं सहलाता हूँ, निज अंतर्मन के घावों को।
भूख-गरीबी-बेगारी-दुख, इनकी तो भाषा है मेरी।
लेकिन तुमको आज बता दूँ, इतनी अभिलाषा है मेरी।
मेरी कविता विश्व-पटल पर, मेरे बाद लिखी रह जाए।
लेकिन कर्म नहीं करना वह, जिससे आँख झुकी रह जाए।।

रक्षक बने भक्षक

हाय! रक्षक बन गए,
विकराल भक्षक; क्या करें?

घर हमारे रह रहे जो काल बनकर।
डस रहे अपनी सुता को व्याल बनकर।
वासना में लिप्त हो दुष्कर्म करके-
छा गए सिर वेदना विकराल बनकर।
बंद रखना ही पड़ेगा गेह पक्षक; क्या करें?
हाय! रक्षक बन गए,विकराल भक्षक; क्या करें??

आपको उपमान दे दूँ व्याध की मैं।
क्या सज़ा दूँ आपके अपराध की मैं?
भर्त्सना करता रहूँगा रोज़ लेकिन-
आपके मन की घृणित इस साध की मैं।
दूध पी जब बन गए विषयुक्त तक्षक; क्या करें?
हाय! रक्षक बन गए, विकराल भक्षक; क्या करें??

दुष्ट को कमज़ोर दिखता आदमी जब।
और आँखों में रहे केवल नमी जब।
आत्मघाती बन कपट से घात करता-
देखता है आत्मरक्षा की कमी जब।
अब स्वयं बनना पड़ेगा आत्मरक्षक; क्या करें?
हाय! रक्षक बन गए, विकराल भक्षक; क्या करें?

अभी सृजन हुआ नहीं

अभी न बैठ तू सृजक, अभी सृजन हुआ नहीं।

विषाद ही विषाद है, उदासियाँ भरी हुईं।
अवाक-सा रहे मुखर, खमोशियाँ भरी हुईं।
गुलाम है, स्वतंत्र तो, अभी वतन हुआ नहीं।
अभी न बैठ तू सृजक, अभी सृजन हुआ नहीं।।

सियाह को सफेद का न आवरण चढ़ा अभी।
अँधेर को प्रकाश का न व्याकरण चढ़ा अभी।
अभी धरा बनी नहीं, अभी गगन बना नहीं।
अभी न बैठ तू सृजक, अभी सृजन हुआ नहीं।।

अनेकता-अनेकता पुकारते रहे सभी।
न दौड़ते हुए यहाँ, न एक या सका अभी।
चरित्र किन्तु शुद्ध है , अभी पतन हुआ नहीं।
अभी न बैठ तू सृजक, अभी सृजन हुआ नहीं।।

मूर्ख हैं मेरी नज़र में

जो यही कहते हमेशा "जानता सर्वस्व हूँ मैं"-
वे भले सर्वज्ञ हों, पर मूर्ख हैं मेरी नज़र में।।

गर्व है उनमें भरा, वे जानते बिलकुल नहीं हैं।
मानते हैं व्यक्ति ऐसे जग गलत हम ही सही हैं।
दूसरों की बात की अवमानना करते सदा वे-
क्योंकि रहते हैं सदा निज गर्व के ही तो असर में।।

सह नहीं सकते, सुने जो खामियाँ निज दूसरों से।
तिलमिलाकर व्यंग्य से उपमान देते सूअरों से।
दूसरों के गुण उन्हें नित कंटकों सम कष्ट देते-
ढूंढते कमियाँ इसी कारण सदा वे हर बशर में।।

अन्य के प्रति दम्भ या पाखण्ड होता आचरण में।
त्रुटियाँ रहती सदा ही बोल-भाषा-व्याकरण में।
विद्वता की बात फिर भी इस तरह करते यहाँ पर-
प्राप्त जैसे कर लिया सर्वस्व अपने उम्रभर में।।

दूसरों की हर सफलता शूल हैं उनके लिए तो।
दूसरों की हर विफलता फूल हैं उनके लिए तो।
फूल को वे शूल कहते, शूल को वे फूल कहते-
इस तरह वे सोचते विपरीत अक़्सर आत्म-उर में।।

जो स्वयं को श्रेष्ठ समझे, मित्रता करना न उनसे।
निम्न हम उनसे भले हों, पर कभी डरना न उनसे।
साथ में यदि चल रहे तो ध्यान खुद का भी रखें हम-
क्या भरोसा कब-कहाँ धोखा हमें दे-दें सफ़र में।।

अरे! फिर मुझे जानता कौन?

अरे! फिर मुझे जानता कौन?

यदि न रच पाता कविता-छंद।
रहा होता यदि मैं मतिमंद।
बैठ होता घर में निस्पंद।
सृजन-संकल्प ठानता कौन?
अरे! फिर मुझे जानता कौन??

अरे! कविता रचना मम भाग्य।
और कवि होना है सौभाग्य।
अगर मैं ले-लेता वैराग्य।
शख्सियत आज मानता कौन?
अरे! फिर मुझे जानता कौन??

अगर हो मानवता पथभ्रष्ट।
सृष्टि से संस्कार हो नष्ट।
मिले यदि मजलूमों को कष्ट।
हाय! तब व्यंग्य तानता कौन?
अरे! फिर मुझे जानता कौन??

तृप्ति बोलो

कोशिशें की सर्वदा तुमसे मिलन की लाख लेकिन-
दूर ही मुझसे रही क्यों? खिन्न होकर, तृप्ति बोलो!

तुम रहा करती हो पुष्पित पुष्प के सौंदर्य में नित,
इसलिए मैं हर सवेरे बाग में मिलने गया हूँ।
भिन्न पुष्पों से सुशोभित, भिन्न खुशबू से सुवासित,
वाटिका सौंदर्य को मैं देखकर विस्मित रहा हूँ।
किन्तु अधिकृत इक सुमन में वास तुम करती नहीं हो-
क्यों? भला रहती सभी में भिन्न होकर, तृप्ति बोलो!

तृप्ति तुम मुझको मिलोगी अंक माँ के इसलिए ही,
बचपने में गोद उसकी त्यागता किञ्चित नहीं था।
तुम मिलोगी साथियों के खेल में मुझसे विहँसकर,
इसलिए ही साथ उनका छोड़ता किञ्चित नहीं था।
हाय! यौवन में तुम्हें तिय देह में ढूंढा बहुत पर-
खो बुजुर्गी में गईं तुम छिन्न होकर, तृप्ति बोलो!

लोग कहते द्रव्य में उपलब्ध तुम रहती हमेशा-
इसलिए मैं वित्त पाने भागता-फिरता रहा हूँ।
ज्ञात मुझको जब हुआ तुम यश-प्रतिष्ठा वासिनी हो-
नींद खोकर, चैन खोकर जागता फिरता रहा हूँ।
आज भी तुम जिंदगी में मिल कहीं जाओ अतः मैं-
नाचता हूँ, रोज तानाधिन्न होकर, तृप्ति बोलो!

शब्द मेरे आचरण बतला रहे हैं

शब्द मेरे आचरण बतला रहे हैं-
क्योंकि वे दर्पण सदृश हैं......!!

शब्द मेरी भावनाओं में बसे हैं।
शब्द मेरी कल्पनाओं में बसे हैं।
शब्द तो मेरे हृदय में वास करते-
शब्द मम संवेदनाओं में बसे हैं।।
शब्द ही तो देह में संचार करते-
क्योंकि वे जीवन सदृश हैं......!!

शब्द ही तो आरती है, वंदना है।
शब्द ही तो प्रार्थना है, अर्चना है।
शब्द ही तो बंदगी है, है इबादत-
शब्द पूजन, ईश की आराधना है।।
शब्द भक्तों को स्वयम्भू से मिलाते-
क्योंकि वे कीर्तन सदृश हैं.......!!

शब्द ही तो नैन को दर्शन कराते।
शब्द ही तो जीभ को वाचन कराते।
शब्द श्रुतिपट को कराते नित श्रवण हैं-
शब्द हमको ज्ञान से रोशन कराते।।
शब्द से अभिव्यक्ति मिलती है सृजन को-
क्योंकि वे तर्पण सदृश हैं.........!!

बेरोजगार

डिग्रियाँ ही डिग्रियाँ हैं पास में- नौकरी लेकिन नहीं पाई सखे..!

नींद में भी जागता चलता रहा, पुस्तकों के बीच में पलता रहा।
रात्रि को कर जागरण पढ़ता हुआ- आँख को मलता रहा-मलता रहा।
डिग्रियाँ तो ली कई मैंने तभी- देह में थी व्याप्त तरुणाई सखे..!

घिस गईं दस चप्पलें, टूटी कई, जून था शुरुआत फिर बीती मई।
वार बीते, माह बीते, वर्ष भी- वक्त से तन में थकावट आ गई।
मापते बनता नहीं अब रात-दिन- रास्तों की दीर्घ लम्बाई सखे..!

दौड़ता चलता रहा मैं धूप में- झुर्रियाँ भी पड़ गईं तब रूप में।
ज़िन्दगी की झंझटों से लग रहा- शीघ्र जाऊँ डूब गहरे कूप में।
क्योंकि मुझको वास्तव में लग रही- नौकरी की दूर परछाई सखे..!

अब तलक पाला मुझे माँ-बाप ने, पूछते सब क्या किया है आपने।
डिग्रियाँ बतला दिया करता तथा- शीघ्र लगता भाग्य को आलापने।
किन्तु जाना सत्य पाना नौकरी- आज सबसे घोर कठिनाई सखे..!

किन्तु युवकों कह रहा मैं आपसे, नौकरी जब दूर हो परिमाप से।
छोड़ उसको, आप कुछ अपना करो- प्राप्त कुछ होता नहीं आलाप से।
पूर्ण सुख से तब भरेगी सत्य ही- दुःख की गम्भीर यह खाई सखे..!

लक्ष्य तेरा दूर है रे..!

चल निरन्तर, बैठ मत तू,
लक्ष्य तेरा दूर है........रे।

लक्ष्य तेरी भूख हो तो,
लक्ष्य तेरी प्यास हो तो।
लक्ष्य पाने की स्वयं में,
सच कहूँ विश्वास हो तो।
इस जगत में सत्य ही तू-
साहसी भरपूर है.......रे।

कर्म में आसक्ति हो तो,
कर्म तेरी भक्ति हो तो।
कार्य सारे पूर्ण होंगे,
व्याप्त तुझमें शक्ति हो तो।
लक्ष्य पाने एक केवल-
कर्म ही दस्तूर है........रे।

उष्ण तेरा रक्त हो तो,
तू परिश्रम भक्त हो तो।
बोल तुझसे खुद पड़ेगा,
लक्ष्य यदि अव्यक्त हो तो।
स्वाद होता है मधुरतम-
लक्ष्य तो अंगूर है.......रे।

जीत मिलेगी, हार नहीं रे!

जीत मिलेगी, हार नहीं रे!

सम्मुख चाहे आए हिमकर,
कदम तले हो खाड़ी-गह्वर,
आग भले उगले यह दिनकर,
या आ जाए खूब बवंडर,
अवरोधों से टकरा जा तू, हार कभी स्वीकार नहीं रे!

मील हज़ारों मिले मरुस्थल,
प्यास रहे पर मिले नहीं जल,
भले कचोटे निज अन्तःस्थल,
बजा रहा हो यम भी साँकल,
फिर भी दुर्गम पथ पर टूटे,निज साहस का तार नहीं रे!

शब्द-शब्द में जोश भरा हो,
गीतों में आक्रोश भरा हो,
साहस से उर-कोश भरा हो,
किन्तु हृदय भी होश भरा हो,
ओजस्वी हो तेरा गायन, कोई करुण पुकार नहीं रे!

विषैले मनुष्य

धँसे हुए मन-बिल के अन्दर, बाहर आने दो।
नाग बड़े ये जहरीले हैं, इन्हें भगाने दो।

जितना दूध पिलाओ उतने, जहर उगलते हैं,
सभ्य जगत में नाग सदृश नर, अक्सर खलते हैं।
इन सर्पों को अपनी बस्ती, नहीं बसाने दो।

काम क्रोध मद मोह लोभवश, मानव छल करता,
पापों में रह लिप्त अभागा ,घट अघ का भरता ।
रावण के दस शीश सदृश ये, इन्हें जलाने दो।

दूर रहें ऐसे लोगों से, जिनमें विष होता,
जो भी इनके साथ रहा है, अक्सर ही रोता।
मुझको गीतों में यथार्थ के, भाव जगाने दो।

अविकास

जैसी अपनी सन्ध्या होती, वैसी अपनी भोर।
हमने अब तक छुई नहीं है, क्यों विकास की डोर।।

जहाँ खड़े थे, वहीं खड़े हैं।
हम तो केवल रिक्त घड़े हैं।
फटेहाल ही आज पड़े हैं।
सोच पुरातन लिए अड़े हैं।
एक कदम भी नहीं बढ़ाया, परिवर्तन की ओर।
हमने अब तक छुई नहीं है, क्यों विकास की डोर।।

तब भी पैदल, अब भी पैदल।
धूम रहें बस जंगल-जंगल।
जीवन अपना लगता दल-दल।
काट रहा है हमको पल-पल।
फिर भी बने हुए हैं अब तक, हम बेहद कमजोर।
हमने अब तक छुई नहीं है, क्यों विकास की डोर।।

हममें केवल द्वेष-भाव है।
रूढ़िवादिता का चुनाव है।
सिर्फ़ दिखाओं का प्रभाव है।
बीच भँवर में फँसी नाव है।
कर्म-धर्म को त्याग सदा हम, करते केवल शोर।
हमने अब तक छुई नहीं है, क्यों विकास की डोर।।

इतने बुरे लगने लगे हैं

कंटकों तुम दूसरों के बाग में रहने लगे क्या?
अब तुम्हें मेरे चमन इतने बुरे लगने लगे हैं।।

मैं तुम्हारे साथ ही तो जन्म से अब तक पला हूँ।
साथ में तुम चल रहे थे, जब-जहाँ-जिस पथ चला हूँ।
तुम जहाँ संघर्षरत थे, मैं वहाँ संघर्षरत था-
रात-दिन संघर्ष की ही अग्नि में अक्सर जला हूँ।
हे! विफलता कोशिशों में अन्य के रहने लगीं क्या?
अब तुम्हें मेरे जतन इतने बुरे लगने लगे हैं।।

जब चला, मैं लक्ष्य पाने राह में तुम ही मिले थे।
सामने इस जिंदगी में बस तुम्हारे क़ाफिले थे।
हाय! निज संघर्ष में मैंने तुम्हें प्रत्यक्ष पाया-
किन्तु तुमसे हौसलों के फूल भी मुझमें खिले थे।
ठोकरों अब तुम पृथक चरणों तले रहने लगीं क्या?
अब तुम्हें मेरे अयन इतने बुरे लगने लगे हैं

भावनाओं में हमेशा वास रहता था तुम्हारा।
निज हृदय में वेदने! आभास रहता था तुम्हारा।
काव्य के हर व्याकरण में तुम बसीं थीं अश्रु बनकर-
व्यक्त हर शब्दांश में अरदास रहता था तुम्हारा।
वेदने! तुम दूसरों के काव्य में रहने लगीं क्या?
अब तुम्हें मेरे सृजन इतने बुरे लगने लगे हैं।।

हिन्द व हिन्दी का सम्मान
है प्रमाण देशभक्ति का
आइए करें
सृजन शब्द से शक्ति का

'आपातकाल'- शासन के द्वारा राष्ट्र पर घोषित आपत्ति का काल (इमरजेंसी) संकट का समय है।

आपातकाल वह समय है, जिसमें साहित्यकारों/ कवियों की महत्ता बढ़ जाती है। ये साहियकार/कविगण अपनी दुगुनी शक्ति के साथ आपातकाल की विभीषिका को जनता के सामने प्रत्यक्ष करता है। साहित्यकार ही ऐसे व्यक्ति हैं जो आपातकाल की विभीषिका का प्रत्यक्ष दृष्टा भी हो सकता है। ये जनता को आपातकाल से बचाने हेतु काव्य-सृजन निर्देशित करते हैं। जब-जब भी विश्व में आपातकाल की स्थिति आई, साहियकारों/कवियों ने वहाँ की पृष्ठभूमि पर जाकर समसामयिक सृजन किया। आपातकाल की विभीषिका, कारण, आपातकाल में फँसे लोगों की चीत्कार, दुर्भिक्ष, वेदना, वहाँ का परिदृश्य को आपातकाल के बीत जाने के बाद तक अपने काव्य में जीवित रखता है।

'बंगाल का काल' नामक कविता में 'डॉ.हरिवंश राय बच्चन' ने जो बंगाल के काल की विभीषिका का जो जीवंत चित्रण किया है, वह दृष्टव्य है-

पड़ गया बंगाले में काल,
भरी कंगालों से धरती,
भरी कंकालों से धरती।

'बाबा नागार्जुन' ने भी 'अकाल और उसके बाद' नामक कविता में आपातकाल के बाद उत्पन्न संकट व भूख की विभस्तता को जीवंत कर दिया है-

कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास।
कई दिनों तक कानी कुतिया, बैठी उसके पास।।
कई दिनों तक लगी भीत पर, छिपकलियों की गश्त।
कई दिनों तक चूहों की भी, हालत रही शिकस्त।।

मैंने भी आपातकाल की स्तिथियों को ध्यान में रखकर कुछ रचनाएँ सृजित किया है। जो आप लोगो के समक्ष दृष्टव्य होंगें।

रचनाकार
भाऊराव महंत
पता- ग्राम बटरमारा, पोस्ट खारा, तहसील किरनापुर, जिला बालाघाट, (मध्यप्रदेश)
E-mail - brmahant@gmail.com
Mobile - 9407307482

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
15, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जिला- बालाघाट (म.प्र.), पिन 481331
संपर्क- 9424765259, अणुडाकः antrashabdshakti@gmail.com
978-93-5372-131-2
मूल्य 50/-

अन्तरा शब्दशक्ति के लिंक्स
Website:- www.antrashabdshakti.com
Facebook page:- https://www.facebook.com/antrashabdshakti/
Fecbook group:- https://www.facebook.com/groups/antraashabdshakti/